

ज्योतिषशास्त्र एवं आयुर्वेद की दृष्टि से उदर रोग

डॉ. विजय प्रसाद रतूड़ी

सहायक प्राध्यापक, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

शोध सारांश

प्राचीन वैदिक दर्शनों में “यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे” का सिद्धांत प्राचीन समय से प्रचलित रहा है। यह सिद्धांत बताता है कि सौर जगत् में सूर्य, चंद्र, आदि ग्रहों की विभिन्न गतिविधियों के क्रिया कलापों में जो नियम कार्य करते हैं ठीक उसी प्रकार से वह नियम प्राणियों के शरीर में स्थित सौर जगत् यानि ग्रहों के द्वारा इस शरीर का संचालन किया जाता है। मनुष्य के मन एवं शरीर में उत्पन्न होने वाले अनेक विकार जिनसे मनुष्य को किसी भी प्रकार से दुख मिलना ही रोग कहलाता है। इन सभी रोगों की उत्पत्ति के कारण, लक्षण, भेद एवं चिकित्सा विधि में आयुर्वेद एवं ज्योतिष शास्त्र की कितनी समानता दिखाई पड़ती है इन सभी का विचार किया गया था। यहां पर यह भी विचार किया गया है की ज्योतिष शास्त्र एवं आयुर्वेद के द्वारा मनुष्य के देह में कोन सा रोग होता है। भगवान् धन्वंतरि ने आचार्य श्रुत से कहा कि रोगी की चिकित्सा प्रारंभ करने से पूर्व ज्योतिष शास्त्र के अनुसार उस जातक के आयु का विचार या परीक्षा करनी चाहिए। क्योंकि आयु के पूर्ण होने पर वह जातक आयु का भोग कर जो भी रोग उस जातक के शरीर में हो उसका विचार ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से करने के पश्चात् आयुर्वेद के द्वारा उस मनुष्य का उपचार सही प्रकार से किया जा सकता है। यदि आयु शेष हो तो रोग, श्रुत, बल एवं औषधि का विचार करने के पश्चात् उस मनुष्य की आयुर्वेद के द्वारा चिकित्सा की जा सकती है। ज्योतिष शास्त्र में आचार्यों ने रोगी के फलादेश करने से पूर्व उस जातक की आयु की परीक्षा करने पर बल दिया है। आयु: पूर्व परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत्। अनायुषां तु मर्त्यानां लक्षणैः नः किं प्रयोजनम्॥ यहाँ पर उदर रोग का कारण, उदर रोग के प्रकार ज्योतिषशास्त्र में जातक की कुंडली में ग्रहों के द्वारा उदर रोग तथा उदर रोग के लक्षण, इत्यादि के बारे में भी बताया गया है। आयुर्वेद में कर्मप्रकोप एवं दोषप्रकोप को रोगोत्पत्ति का कारण माना जाता है। जब मनुष्य ऋतु के अनुसार आहार विहार करता हो सद्गति का सेवन कर रहा हो, रोग होने का कोई मौसम भी न हो तो ऐसी परिस्थिति में मनुष्य के शरीर में रोग का होना कर्मजन्य रोग कहलाता है। मनुष्य के रोग का समाधान कैसे हो सके उसके लिए ज्योतिष शास्त्र में ग्रह नक्षत्रों के माध्यम से रोग का ज्ञान किया जाता है, तथा आयुर्वेद के द्वारा औषधि के माध्यम से मनुष्य के रोग का उपचार किया जाता है। ज्योतिष शास्त्र में रोग को एक प्रमुख रोग मानकर रोग के कारणों का, लक्षणों का ज्ञान किया जाता है, जिससे रोग का ज्ञान होने के शीघ्र ही आयुर्वेद के द्वारा उस रोग का निदान किया जा सके। रोगों में उन्माद रोग का होना, हर्ष, भय इच्छा, शोक की प्रबलता से उन्माद रोग होता है। यहां पर आयुर्वेद ग्रंथों में उन्माद रोग, लक्षण, तथा उन्माद के भेद कितने हैं, वात, कफ, पित्तादि रोगों का उल्लेख आयुर्वेद में किया गया है। ठीक इसी प्रकार से ज्योतिष शास्त्र ग्रंथों में भी पित्तजन्य के लक्षणों का, उदर रोग का आयुर्वेद तथा ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से समाधान बताया गया है।

बीज शब्द: ज्योतिषशास्त्र, आयुर्वेद, उदर रोग, रोगोत्पत्ति, कर्म एवं ग्रहयोग

मूल आलेख

ज्योतिषशास्त्र एवं आयुर्वेद दोनों का सम्बन्ध अतिप्राचीन रहा है। शास्त्र में सूक्ति भी है “ज्योतिर्वैद्यौनिरन्तरम्” दोनों शास्त्र इस बात पर सहमत रहते हैं कि मनुष्य अपने पूर्वार्जित अशुभ कर्मों के प्रभाववश रोगी बन जाता है। ज्योतिषशास्त्र में जन्मकुण्डली के माध्यम से पूर्व में ही रोगों का ज्ञान किया जा सकता है, कि कब और कौन सी व्याधि होगी इस सम्बन्ध में कुछ बुद्धिमान लोगों की यह धारणा है कि मानव आहार विहार के कारण सुनिश्चित

समय पर आहार-विहार का न होना जिससे अनेक रोग उत्पन्न होते रहते हैं। यदि मानव इन पर समुचित नियन्त्रण रखे तो वह स्वस्थ एवं दीर्घजीवी बना रहता है। परन्तु ज्योतिषशास्त्र की मान्यता इससे कुछ भिन्न है। ज्योतिषशास्त्र अनियमित आहार-विहार को ही रोगोत्पत्ति का कारण नहीं मानता है। क्योंकि अधिकतम यह बात प्रत्यक्ष रूप से देखने में आती है। कि कुछ लोग नितान्त एवं अनियमित जीवन व्यतीत करते हुए भी उनका स्वास्थ्य सही रहता है। कुछ लोग निरन्तर जीवन के अभ्यासी होते हैं। वे समय के द्वारा अपने आहार-विहार का ध्यान रखते हैं। उसके बाद भी उनका स्वास्थ्य अस्वस्थ रहता है। और वे रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। यदि आहार विहार को ही रोगोत्पत्ति का कारण माना जाय तो आनुवांशिक रोग महामारी रोग एक अन्य रोगों की उत्पत्ति के कारण सही प्रकार से रोगोत्पत्ति की व्याख्या नहीं किया जा सकता है। यही एक कारण है कि आयुर्वेदशास्त्र ने रोगोत्पत्ति के कारणों का विचार करने के बाद कभी कभी पूर्वार्जित कर्मों के प्रभाव से कभी कभी दोषों के प्रकोप से और कभी कभी इन दोनों के प्रभाव से शारीरिक शारीरिकरोग (वात, कफ, पित्त) एक मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं। ज्योतिषशास्त्र की यह मान्यता रही है कि प्रत्येक छोटा और बड़ा रोग पूर्वार्जित कर्मफल के रूप में रोग उत्पन्न होता है। ज्योतिषशास्त्र में जन्मसमय प्रश्नकाल एवं गोचरकाल में जो प्रतिकूल ग्रह है। उनके प्रभाववश रोगों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसी मान्यता के अनुसार किसी भी जातक की जन्मकुण्डली के आधार पर वर्षों पूर्व ही यह घोषित किया गया कि जातक को कब और कौन सा रोग होगा। कर्मों के प्रभाववश उत्पन्न होने वाले रोगों का विचार ज्योतिष ग्रन्थों में प्रतिपादित ग्रहयोगों के आधार पर किया जाता है। सूर्यादिग्रह मनुष्य के शरीर के अंग धातु, एवं दोषों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जब ग्रह अनिष्ट स्थान में स्थित होने के कारण अनिष्टप्रभावकारी हो जाता है, तब वह शरीर के अंग धातु एवं दोष आदि में विकार या रोग के बारे में सूचना देता रहता है। परन्तु जब वही ग्रह इष्ट स्थान आदि में स्थित होने के कारण इष्ट प्रभावयुक्त होता है, तब वह शरीर के अंग-धातु दोष आदि में आरोग्यता की सूचना देता है।

आयुर्वेद में उदर रोग के कारण एवं लक्षण-

उदृणातीति उददृणातेरजलौ पूर्वपदान्त्यलोपश्च उत्+ट्+अच् अन्त्यलोपश्च नाभिस्तनयोर्मध्यभागः, पिचण्डः, कुक्षिः, जठरम्, तुन्दरम् इति। नाभिस्तनयोर्मध्ये ये रोगविशेषास्ते 'उदररोगः'।

अर्थात् नाभि और स्तनों के बीच में रहने वाले प्रत्यंगों में रहनेवाले रोगों को उदररोग कहा जाता है।¹

प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों ने आठ प्रकार के रोगों की गणना की है। उनमें से 1. वातोदर, 2. पित्तोदर, 3. कफोदर, 4. सन्निपातोदर, 5. प्लीहोदर, 6. बुद्धगुदोदर, 7. क्षतोदर, 8. जलोदर। प्लीहोदर के अन्तर्गत ही गणना यकृदाल्युदर को भी लिया जाता है। इस प्रकार सभी उदररोगों की संख्या 10 हो जाती है। यदि अगन्तुज 'ईष्योदर' का भी समावेश किया जाय तो उदररोगों की संख्या 11 हो जाती है।²

उदररोग के प्रकार-

वातोदर- (इष्टिस्का खुश्क) इस तरह के रोग से समस्त उदरप्रान्त पर काली सिराएँ उभर आती है। शूल और आध्यमान रहता है। और उदर ऊँची आवाज में गुड़- गुड़ करने लगता है।³

पित्तोदर- (इष्टिस्का सफरावी वातोल्बणं सपित्तेन पित्तोदरः) उदर में उत्सेह तो होता ही है। परन्तु उदर में दाह एवं ज्वर भी पाया जाता है। उदर के ऊपर को जो सिराएँ हैं वो ताम्रवर्ण की होती है। उसमें पसीने होने पर प्रायः ज्वर उतर जाता है। और पित्तकाल में पुनः पित्तोदर होने लगता है।

कफोदर- आधुनिक वैज्ञानिकों के कथनानुसार इसके दो भेद होते हैं। 1. इस्तिस्काऽकसूरी, 2. इस्तिस्काकायेली। इस प्राकारों में वातोदर की अपेक्षा औदारिक प्रान्त पर अशिक उत्सेश होता है। एवं काठिन्य भी ज्यादा प्राप्त होता है। नाभिगत बहुत अशिक उभर आता है।

सन्निपातोदर - वात, कफ, पित्त इन तीनों प्रकार के लक्षण सम्मिलित रूप से पाये जाते हैं।

प्लीहोदर- (इजयतिहाल) प्लीहा का धीरे-धीरे अपने स्वभाविक आकार से बढ़ता जाना ही प्लीहाजठर रोग होता है।

बुद्धगुदोदर- आंत परिवर्तनजरा शूल-इलियस-अंतडियों में बल पड़ जाने पर यह रोग होता है। आचार्य चरक ने कहा है"। अपानो वा "उदावर्तस्तथाऽशोभिरन्नसम्भूदनेन मार्गसंराधाद्धात्वग्रिकुपितोऽनिलः वर्चः पित्तकफान् रुद्धा जनयत्युदर तथा" उदावर्त अर्श अथवा आंत सम्युच्छेन आंत परिवर्तन होने के कारण अपानवायु का मार्ग रुक जाता है। धात्वग्रि एवं वायु प्रकुपित हो जाती है। पूर्व संचित मल, कफ और पित्त रुक जाते हैं। और बुद्धगुदोदर उत्पन्न होता है। इस रोग में यदि वमन होती है। आचार्य सुश्रुत के मतानुसार- "मुच्छर्दयन् विट समगन्धिकं बुद्धगुदं विभाव्यः।"⁴

यकृदाल्युदर- यकृत और प्लीहा की एक साथ अभिवृद्धि का होना यकृदाल्युदर दलनं दाली फैल जाता है। चौड़ा हो जाना, बड़ा हो जाना, उसके परिणाम स्वरूप उदर प्रान्त का उत्सेहायुक्त दिखाई देना 'यकृदाल्युदर' कहलाता है।

जलोदर- (उदकोदर इस्तिस्काउल् वारीतून) जलोदर पांच प्रकार का होता है।

1. प्रतिहारिणी
2. वृद्धिकारजन्य जलोदर
3. वृक्कविकारजन्य जलोदर
4. उदरावरण शोधजन्य जलोदर
5. रक्तदोषजन्य जलोदर।

वात, कफ, पित्त और सन्निपातोदर इन दोष परक प्रभेदों में जलोदर के आरम्भिक लक्षण विद्यमान रहते हैं। धीरे-धीरे जल संचय होते होते ओदारिक प्रान्त बृहतकाय यानी उत्सेहायुक्त होने लगता है। इसी स्थिति का नाम जलोदर है।

ज्योतिष शास्त्र में उदर रोग

उदर में होनेवाले रोगों को उदर रोग कहते हैं। जैसे अरुचि का होना, मन्दाग्रि, अजीर्ण, अतिसार, संग्रहणी, गुल्म, प्लीहा, कृमि, जलोदर एवं उदरशूल का होना ही उदररोग कहलाता है। ज्योतिषशास्त्र में ग्रहों के अनुसार रोगों का विचार किया जाता है। जैसे उदहरविकार का प्रतिनिधि ग्रह चन्द्रमा होता है। यदि चन्द्रमा सिंह राशि में हो या लग्न या षष्ठभाव में हो तो जातक का उदर रोग से ग्रसित रहता है।

1. यदि सिंह राशि में चन्द्रमा हो तो उदर रोग की स्थिति बनती है।⁵
2. यदि जन्मांग कुण्डली में चन्द्रमा षष्ठभाव में हो तो उदररोग होता है।⁶
3. सप्तम स्थान में राहु केतु ग्रह स्थित हो तो उदररोग से ग्रसित होता है।⁷
4. तृतीय भाव में गुरु हो तो अरुचि होती है।⁸
5. यदि लग्न में मंगल हो तथा षष्ठेश निर्बल हो तो उदर में अजीर्ण होता है।⁹

यदि जातक की जन्मांग कुण्डली में सिंह राशि के साथ क्षीण चन्द्रमा बैठा हो और चन्द्रमा की महादशा या अन्तर्दशा चल रही हो तो वह जातक दांत और पेट से संबन्धित रोगों से परेशान रहता है। उदर रोगों से ग्रसित रहता है।

सिंहस्थो द्विजनाथः करोति जातं रदनजठररोगार्तम्।

स्त्रीद्वेषिणं च पुरुषं तथा पिपासाक्षुधाविष्टम्।¹⁰

उदर में होने वाले रोग को उदररोग कहते हैं। अरुचि का होना, मन्दाग्नि, अजीर्ण, अतिसार, संग्रहणी, गुल्म, प्लीहा, कृमि, जलोदर एवं उदरशूल का होना ये सब उदररोग कहलाते हैं। ज्योतिषशास्त्र के अनुसार- यदि जातक की कुण्डली में चन्द्रमा जन्मांग से षष्ठ भाव में हो तो वह जातक शत्रुओं से आकान्त तथा मन्दाग्नि तथा उदररोग से पीडित तथा आलसी होता है।

प्रचुरामित्रस्तीक्ष्णो मृदुकायाग्निर्मदालसश्चन्द्रे

षष्ठे चोदररोगैः प्रपीडितः मुमान्भवति।।¹¹

यदि जातक के जन्मांग से षष्ठ स्थान में यदि गुरु हो। तथा षष्ठेश पापग्रहों से दृष्ट हो तो उदरशूल होता है।¹²

यदि सिंह राशि में स्थित चन्द्रमा पापग्रहों से दृष्ट हो तो उदरशूल होता है।¹³

यदि शत्रु राशि या नीच राशि में लग्नेश हो, चतुर्थस्थान में भौम हो तथा शनि ग्रह पर पापग्रहों की दृष्टि पड़ती हो तो उदररोग से पीडित होता है।¹⁴

उदर रोग के कारण-

सभी रोगों की उत्पत्ति उदर से ही होती है। विशेषतः उदर रोग अतिमन्दाग्नि से ही होते हैं। मन्दाग्नि से उदर में अजीर्ण से दूषित आन्नाहार एवं मल के द्वारा ही उदररोग होते हैं।

रोगाः सर्वेऽति मन्दाग्नौ सुतरामुदराणि च।

अजीर्णान्मलिनैश्चात्रैर्जायन्ते मलसंचयात्।।¹⁵

मलों के संचय से स्वेवाही एवं जलवाही स्रोतों में अवरोधक उत्पन्न होता है। इससे प्राणवायु, अपानवायु एवं जठराग्नि संदूषित होती है। शरीर के स्वेदवार्हा, जलवाहां स्रावों एवं प्राणवायु अपानवायु तथा जठराग्नि का संदूषित होना ही उदररोगों का कारण बनता है।

रुध्वा स्वेदाम्बुवाहीनिदोषाः स्रोतांसि सचिताः।

प्राणाश्चपानासन्दूष्य जनरान्त्युदरनृणाम्।।¹⁶

इसी प्रकार उदररोग उत्पन्न होने से पूर्व रोगी को, भूख की इच्छा तथा औदारिक बलियों का धीरे-धीरे क्षति या कमी होती है। किये गये भोजन का देरी से पाचन होता है। तथा भोजन और भोजनरस का विवेक होने लगता है।

भोजन पचा या नहीं इसका ज्ञान रोगी नहीं कर पाता है। रोगी के पैरों में शोश आने लगता है। एवं शरीर को अस्थियों में मूत्राशय में पीडा होने लगती है।

उदररोग का सामान्य लक्षण-

जब उदररोग उत्पन्न होता है उस समय सभी प्रकार के उदर रोगों में सर्वप्रथम प्रमुख लक्षण अध्यमान का होता है। रोगी जब इधर-उधर चलता है तो असुविधा तथा असमर्थता का अनुभव करता है। तथा मानसिक दौर्बल्य, शारीरिक दौर्बल्य, जठराग्नि की दुर्बलता तथा मंदाग्नि शरीर के अग्रभागों में शोश का होना शिथिलता का होना, वायु एवं मल का अवरोध दाह तथा तन्द्रा आदि लक्षण सामान्य रूप से पाये जाते हैं।

आध्यामनगमनेऽशक्तिदौर्बल्यं दुर्बलाग्निता

शोफः सदनमंगानां तंगो वातपुरीषयोः

दाहस्तन्द्रा च सर्वेषु जठरेषु भवन्ति हि ।।¹⁷

उदररोग के प्रकार- मुख्य रूप से उदर रोग के आठ भेद कहे गये हैं।

वात, कफ, पित्त, सन्निपातोदर, प्लीहोदर बद्धोदर, बद्धगुदोदर, क्षतोदर।

नलोदर ये आठ प्रकार के उदररोग बताये गये हैं।

पृथग्दोषैः समस्तैश्च प्लीहबद्धक्षतोदकैः।

सम्भवन्त्युदराण्यष्टौ तेषां लिंगं पृथक् पृथक् ।।

इन्हीं रोगों से उदर में दर्द की स्थिति बनती है शूनाक्षता आंखों की पलकों पर सूजन का आना शरीरकी त्वचा पतली और आर्द्र, बल, रक्त मांस तथा जठराग्नि में क्षीणता ये उदररोग के लक्षण तथा असाध्य के निदर्शक हैं।

उदररोग के उपचार- उदररोग को दूर करने के लिए रक्तशालि यव, मुद्गा जागल देशीय मृग के मांस का रस तथा आस्थापन जास्त उन द्रव्यों की बस्ति देना चाहिए जो कि शरीरस्थ दोषों का संशोधन करके शरीर में यदि स्थिरता लाता हो तो जो भी उदररोग से ग्रसित है। उनको, लालबावल, जौ, मूंग, मृगमांसरस विरेचन तथा आस्थापन वस्ति का प्रयोग करना चाहिए, ये उपाय श्रेयस्कर हैं।

रक्तशालियवा मुद्गा जांगलाश्च रसा हिताः।

विरेकास्थापनं शस्तं सर्वेषु जठरेषु च ।।¹⁸

जिस व्यक्ति को वातरोग होता है, तो वातरोग से पीडित व्यक्ति को मटठे के साथ पिप्पली का 4 रस्ती-चूर्ण और 8 रस्ती लवण मिलाकर अनुमानरूप में रोगी को पीना चाहिए।

सर्वेभ्योऽप्युदरेभ्यस्तु द्रुतं मुच्येतमानवः।

वातोदरी पिबेतकं पिप्पलीलवणान्वितम् ।।¹⁹

वातरोग से आमवात, शूल, सन्धिशूल एवं पक्षाघात जैसे रोग होते हैं। वायुकोप से उत्पन्न रोग शरीर में आलस्य अनिद्रा हल्का सा दर्द, कम्पन एवं अंगसुप्तता उत्पन्न करते हैं। ज्योतिष शास्त्रानुसार वातरोग के योग-

1. यदि कर्क राशि में स्थित सूर्य पर शनि की दृष्टि हो।²⁰
2. पापग्रह के साथ चन्द्रमा षष्ठभाव में हो तथा पापग्रह की दृष्टि हो तो जातक को वात योग होता है।²¹

3. यदि जातक की कुंडली के षष्ठ भाव में गुरु हो तथा षष्ठेश पाप ग्रहों से युत एवं दृष्ट हो तो उदर रोग रहता है।¹²²
4. षष्ठ एवं द्वादश भाव में शनि एवं मंगल होने से भी उदर रोग होता है।¹²³
5. यदि जातक की कुंडली में लाभेश तृतीय भाव में हो तो उदर रोग होता है।¹²⁴
6. केन्द्र या त्रिकोण भाव में सिंह राशि में शुक्र हो तथा तृतीय भाव में गुरु हो तो उदर रोग होता है।¹²⁵
7. जातक की कुंडली में षष्ठस्थ गुरु की महादशा होने पर उदर रोग होता है।¹²⁶

उपसंहार

आयुर्वेद एवं ज्योतिष शास्त्र की दृष्टि से वात, कफ, पित, से युक्त, उदर रोग को दूर किया जा सकता है। जिस प्रकार ग्रहों का प्रभाव उदर रोग उत्पन्न करना है। उसी से रोग बढ़ता रहता है। आयुर्वेद के माध्यम से औषधि द्वारा उदर रोग का समाधान किया जा सकता है। ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों के स्वरूप के अनुसार या स्वभाव से जातक की कुंडली में जिन जिन भावों में जो भी ग्रह बैठा हो वह उस प्रकार का फल देता हुआ उस प्रकार के रोग को उत्पन्न करता है, जिससे मनुष्य उस रोग से परेशान रहता है। जैसे नेत्रों का लाल होना, असहिष्णुता, विदग्धता, क्रोध का होना शरीर का पीला होना, उदर रोग होना ये सभी रोग ज्योतिष शास्त्र में ग्रहों के अनुरूप बताया गया है। आचार्य मनु भी इस बात को स्वीकार करते हुए कहते हैं। उन्माद रोग की चिकित्सा ज्योतिष एवं आयुर्वेद की दृष्टि कोण से पूरी तरह किया जा सकता है। ये दोनों आयुर्वेद एवं ज्योतिष शास्त्र एक दूसरे के पूरक हैं। ज्योतिष शास्त्र ग्रंथों में उल्लेख किया गया है कि वातजन्य उन्माद रोग में स्नेहपान, पित्तजन्य उन्माद में विरेचन, कफजन्य उन्माद में नस्य तथा वमन ये सभी क्रियाएं करनी चाहिए। यहां पर आयुर्वेद एवं ज्योतिष शास्त्र का आपस में समन्वय देखने को मिलता है कि दोनों, आयुर्वेद एवं ज्योतिष शास्त्र रोगों की समस्याओं का ज्ञान तथा इन रोगों का निदान करते हैं। यदि किसी जातक को रोग की समस्या है तो ज्योतिष शास्त्र द्वारा ग्रहों का विचार किया जाता है। किसी व्यक्ति की कुंडली के द्वादश भाव में सूर्य बैठा हो तो उस जातक को पित्त की समस्या अधिक रहती है। इसी प्रकार से ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से कब कब किस किस भाव में कोन से ग्रहों स्थित हैं, उन सभी का उल्लेख किया गया है तथा रोगों का समाधान आयुर्वेद के द्वारा कैसे किया जाय उसका भी वर्णन किया गया है। आयुर्वेद एवं ज्योतिष के द्वारा उदर रोग का उल्लेख इस लेख में किया गया है। इन सभी का चिन्तन करने से यह पता चलता है कि आयुर्वेद में सभी प्रकार के रोगों का निवारण संभव है। इन रोगों का उल्लेख आयुर्वेद ग्रंथों में प्राप्त होता है। जिससे वह उदर रोगी सुखी हो सके तथा उदर रोग से मुक्ति प्राप्त कर सके। आयुर्वेद तथा ज्योतिषशास्त्र के माध्यम से वह रोगी निरोगी रहे। इन सभी का चिन्तन करना चाहिए।

संदर्भ सूची

1. वीरसिंहावलोकन- उदररोगाधिकार: पृ. 342 लेखक राजवीर सिंह तोमर
2. वीरसिंहावलोकन- उदररोगाधिकार: पृ. 342 लेखक राजवीर सिंह तोमर
3. वीरसिंहावलोकन - उदररोगाधिकार: पृ. 342 लेखक राजवीर सिंह तोमर
4. वीरसिंहावलोकन- उदररोगाधिकार: लेखक राजवीर सिंह तोमर
5. बृ. जातक 17.5,(6). सारावली 30.19,(7).जातकतत्त्व 6.60
6. सारावली 30.52-55 लेखक कल्याण वर्मा
7. जातक पा. 6.90 लेखक आचार्य वैद्यनाथ दीक्षित
8. वीरसिंहावलोक - उदररोगाध्याय श्लो.1, पृ.344 लेखक राजवीर सिंह तोमर
9. वीरसिंहावलोक - उदररोगाध्याय श्लो. 3 पृ. 344 लेखक राजवीर सिंह तोमर
10. दैवज्ञभूषण 14.27 लेखक लक्ष्मी नारायण उपाध्याय

11. जातकतत्त्व 6.134 आचार्य महादेव शर्मा
12. जातक पा. 6.91 लेखक आचार्य वैद्यनाथ दीक्षित
13. वीरसिंहावलोक, उदररोगाध्याय 13.348 लेखक राजवीर सिंह तोमर
14. वीरसिंहावलोक, उदररोगाध्याय 14.348 लेखक राजवीर सिंह तोमर
15. वीरसिंहावलोक, उदररोगाध्याय 16.349 लेखक राजवीर सिंह तोमर
16. वीरसिंहावलोक, उदररोगाध्याय 19.350 लेखक राजवीर सिंह तोमर
17. वीरसिंहावलोक, उदररोगाध्याय 22.350 लेखक राजवीर सिंह तोमर
18. सारावली 3.37-38 आचार्य 'कल्याण वर्मा
19. सारावली 3.42-4 आचार्य 'कल्याण वर्मा
20. दैवज्ञा भरण, प्र 14, श्लोक 31, लेखक लक्ष्मी नारायण उपाध्याय
21. जातक तत्त्व षष्ठ विवेक, श्लोक 133 आचार्य महादेव शर्मा
22. जातक तत्त्व षष्ठ विवेक श्लोक 135, आचार्य महादेव शर्मा
23. जातक तत्त्व षष्ठ विवेक श्लोक 136, आचार्य महादेव शर्मा
24. सर्वार्थचिंतामणि श्लोक अध्याय 15 श्री वेंकटेश शर्मा